INTÉZETI FORDÍTÓVERSENY, 2017

Az irodalmi igényű műfordításokat 2017. június 12-én 15 óráig várjuk az **intézeti titkárságon** (B. ép. 103) jeligével ellátva, valamint a jelige feloldását tartalmazó lezárt borítékkal (benne név és Neptun-kód).

Eddig meghirdetett kategóriák:

(1) Bibliai héber – poétikus szövegrész: Ékha / Siralmak / Jeremiás siralmai 5.

(2) Bibliai héber – prózai szövegrész: 2Sámuel 13,1–22.

(3) Bibliai arámi – poétikus és prózai szövegrész: Dániel 7,1–18.

(4) Ógörög próza: Ailianos, Tarka történetek 5.12–18 (Néhány eset az athéni törvényhozásról és bíróságról)

(5) Ógörög vers: Töredékek a törvénytelen vagyonszerzésről (Részletek Stobaios idézetgyűjteményéből; 3.10)

(6) Szanszkrit

(7) Hindi próza

(8) Hindi vers

(9) Újgörög próza: Ανδρέας Μήτσου: Κουστούμι από γνήσιο αγγλικό κασμίρ

(10) Újgörög vers: Αγγελική Ζερβαντωνάκη: Παιδίοθεν

Az ógörög, a hindi, a szanszkrit és az újgörög szövegeket lásd a mellékelt képeken.

Egy hallgató több kategóriában is indulhat, eredményhirdetés az intézeti évzárón várható. A győztes könyvjutalomban részesül, a kiemelkedő minőségű pályamunkát a bíráló publikálásra is javasolhatja.

Rāmāyaṇa II. 57. 10-39.

Daśaratha elmeséli Kauśalyának,

Hogyan ölt meg tévedésből egy remetefiút:

५७

प्रतिबुद्धो मुहूर्तेन शोकोपहतचेतनः ।
अथ राजा दशरथः स चिन्तामभ्यपद्यत ॥ १

रामलक्ष्मणयोश्चैव विवासाद्वासवोपमम् ।
आविवेशोपसर्गस्तं तमः सूर्यमिवासुरम् ॥ २

स राजा रजनीं षष्ठीं रामे प्रव्राजिते वनम् ।
अर्धरात्रे दशरथः संस्मरन्दुष्कृतं कृतम् ।
कौसल्यां पुत्रशोकार्तामिदं वचनमब्रवीत् ॥ ३

यदाचरति कल्याणि शुभं वा यदि वाशुभम् ।
तदेव लभते भद्रे कर्ता कर्मजमात्मनः ॥ ४

गुरुलाघवमर्थानामारम्भे कर्मणां फलम् ।
दोषं वा यो न जानाति स बाल इति ह्युच्यते ॥ ५

कश्चिदाम्रवणं छित्त्वा पलाशांश्च निषिञ्चति ।
पुष्पं दृष्ट्वा फले गृध्नुः स शोचति फलागमे ॥ ६

सोऽहमाम्रवणं छित्त्वा पलाशांश्च न्यषेचयम् ।
रामं फलागमे त्यक्त्वा पश्चाच्छोचामि दुर्मतिः ॥ ७

लब्धशब्देन कौसल्ये कुमारेण धनुष्मता ।
कुमारः शब्दवेधीति मया पापमिदं कृतम् ।
तदिदं मेऽनुसंप्राप्तं देवि दुःखं स्वयंकृतम् ॥ ८

संमोहादिह बालेन यथा स्याद्भक्षितं विषम् ।
एवं ममाप्यविज्ञातं शब्दवेध्यमयं फलम् ॥ ९

देव्यनूढा त्वमभवो युवराजो भवाम्यहम् ।
ततः प्रावृडनुप्राप्ता मदकामविवर्धिनी ॥ १०

उपास्य हि रसान्भौमांस्तप्त्वा च जगदंशुभिः ।
परेताचरितां भीमां रविराविशते दिशम् ॥ ११

उष्णमन्तर्दधे सद्यः स्निग्धा ददृशिरे घनाः ।
ततो जहृषिरे सर्वे भेकसारङ्गबर्हिणः ॥ १२

पतितेनाम्भसा छन्नः पतमानेन चासकृत् ।
आबभौ मत्तसारङ्गस्तोयराशिरिवाचलः ॥ १३

तस्मिन्नतिसुखे काले धनुष्मानिषुमान्रथी ।
व्यायामकृतसंकल्पः सरयूमन्वगां नदीम् ॥ १४

निपाने महिषं रात्रौ गजं वाभ्यागतं नदीम् ।
अन्यं वा श्वापदं कंचिज्जिघांसुरजितेन्द्रियः ॥ १५

अथान्धकारे त्वश्रौषं जले कुम्भस्य पूर्यतः ।
अचक्षुर्विषये घोषं वारणस्येव नर्दतः ॥ १६

ततोऽहं शरमुद्धृत्य दीप्तमाशीविषोपमम् ।
अमुञ्चं निशितं बाणमहमाशीविषोपमम् ॥ १७

तत्र वागुषसि व्यक्ता प्रादुरासीद्वनौकसः ।
हा हेति पततस्तोये वागभूत्तत्र मानुषी ।
कथमस्मद्विधे शस्त्रं निपतेत्तु तपस्विनि ॥ १८

प्रविविक्तां नदीं रात्रावुदाहारोऽहमागतः ।
इषुणाभिहतः केन कस्य वा किं कृतं मया ॥ १९

ऋषेर्हि न्यस्तदण्डस्य वने वन्येन जीवतः ।
कथं नु शस्त्रेण वधो मद्विधस्य विधीयते ॥ २०

जटाभारधरस्यैव वल्कलाजिनवाससः ।
को वधेन ममार्थी स्यात्किं वास्यापकृतं मया ॥ २१

एवं निष्फलमारब्धं केवलानर्थसंहितम् ।
न कश्चित्साधु मन्येत यथैव गुरुतल्पगम् ॥ २२

नेमं तथानुशोचामि जीवितक्षयमात्मनः ।
मातरं पितरं चोभावनुशोचामि मद्वधे ॥ २३

तदेतन्मिथुनं वृद्धं चिरकालभृतं मया ।
मयि पञ्चत्वमापन्ने कां वृत्तिं वर्तयिष्यति ॥ २४

वृद्धौ च मातापितरावहं चैकेषुणा हतः ।
केन स्म निहताः सर्वे सुबालेनाकृतात्मना ॥ २५

तां गिरं करुणां श्रुत्वा मम धर्मानुकाङ्क्षिणः ।
कराभ्यां सशरं चापं व्यथितस्यापतद्भुवि ॥ २६

तं देशमहमागम्य दीनसत्त्वः सुदुर्मनाः ।
अपश्यमिषुणा तीरे सरय्वास्तापसं हतम् ॥ २७

स मामुद्वीक्ष्य नेत्राभ्यां अस्रमस्वस्थचेतसम् ।
इत्युवाच वचः क्रूरं दिधक्षन्निव तेजसा ॥ २८

किं तवापकृतं राजन्वने निवसता मया ।
जिहीर्षुरम्भो गुर्वर्थं यदहं ताडितस्त्वया ॥ २९

एकेन खलु बाणेन मर्मण्यभिहते मयि ।
द्वावन्धौ निहतौ वृद्धौ माता जनयिता च मे ॥ ३०

तौ नूनं दुर्बलावन्धौ मत्प्रतीक्षौ पिपासितौ ।
चिरमाशाकृतां तृष्णां कष्टां संधारयिष्यतः ॥ ३१

न नूनं तपसो वास्ति फलयोगः श्रुतस्य वा ।
पिता यन्मां न जानाति शयानं पतितं भुवि ॥ ३२

आनयन्नपि च किं कुर्यादशक्तिरपरिक्रमः ।
भिद्यमानमिवाशक्तस्त्रातुमन्यो नगो नगम् ॥ ३३

पितुस्त्वमेव मे गत्वा शीघ्रमाचक्ष्व राघव ।
न त्वामनुदहेत्क्रुद्धो वनं वह्निरिवैधितः ॥ ३४

इयमेकपदी राजन्यतो मे पितुराश्रमः ।
तं प्रसादय गत्वा त्वं न त्वां स कुपितः शपेत् ॥ ३५

विशल्यं कुरु मां राजन्मर्म मे निशितः शरः ।
रुणद्धि मृदु सोत्सेधं तीरमम्बुरयो यथा ॥ ३६

न द्विजातिरहं राजन्मा भूत्ते मनसो व्यथा ।
शूद्रायामस्मि वैश्येन जातो जनपदाधिप ॥ ३७

इतीव वदतः कृच्छ्राद्बाणाभिहतमर्मणः ।
तस्य त्वानम्यमानस्य तं बाणमहमुद्धरम् ॥ ३८

जलार्द्रगात्रं तु विलप्य कृच्छ्रा-
न्मर्मव्रणं संततमुच्छ्वसन्तम् ।
ततः सरय्वां तमहं शयानं
समीक्ष्य भद्रे सुभृशं विषण्णः ॥ ३९

इति श्रीरामायणे अयोध्याकाण्डे सप्तपञ्चाशः सर्गः ॥ ५७ ॥

डरो मत, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा

उस तूफ़ानी-सी रात में जब ऊपर का आकाश नारों से गूँज रहा था, दो बाँहों ने किसी सुन्दर सुकुमार शरीर को थामकर आश्वासन दिया—"डरो मत, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा।"

बाँहें बाँहों से मिलीं और भय से सिकुड़ी हुई दो आँखें मुस्करा दीं। आँखों से आँखें मिलीं और पृथ्वी के आँचल पर शबनम चू पड़ी।

आकाश के मोती भू पर फूल बनकर खिल गये और एक दिन···'मारो-मारो, काटो,' 'अल्ला-हो-अकबर,' 'हर-हर महादेव'···बहार के गुलशन को रौंदते हुए वह हजारों कदम, खून में तैरती हुई वह आँखें और हथियारों को तौलते हुए वह हाथ··· !

उस बन्द मकान में, साँस रोके हुए दो प्राणी डोलते-डालते, डूबते-डूबते, ज़िन्दगी और मौत की कशमकश में।

'मारो-मारो' की आवाजें करीब आ रही हैं। और करीब, और करीब—हल्की-सी चीख निकली और दो मजबूत बाँहों ने उस मूर्छित-से शरीर को थामकर धीमे-से कहा, "डरो मत, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा।" सहसा द्वार पर हज़ारों की भीड़, किवाड़ टूट गये—'मार दो, जला दो'—और पलक झपकते हाथों से हाथ छूट गये। पुराने वायदे टूट गये। "मैं इसकी रक्षा करूँगा, मैं···" स्वर उखड़ गया। किसी ने गला दबाकर सिर दीवार के साथ दे पटका और सुकुमार बाँहें अपनी ओर खींच लीं।

सिर घूमा, आँखें घूमीं, ज़मीन घूमी, आसमान घूमा···और उस चक्कर में देखा— वह नन्हा-सा मीठा शरीर खूँखारों के हाथों में ! हाय—एक धार चमकी और सोने से भरी सुनहली बाँहें कटकर नीचे गिर पड़ीं।

"डरो मत···मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा !"

एक सुनसान दुपहरी में कैम्प के सामने कुछ लारियाँ आ खड़ी हुईं। बच्चे, बूढ़े घायल उतर रहे हैं। भूख से और प्यास से विकल। गिरते-पड़ते, लेकिन इस पिछली सीट पर···? एक निर्जीव युवक···पथरायी आँखें, सूखे बाल और नीले अधर···ड्राइवर ने हमदर्दी के गीले स्वर में उस बेजान शरीर को झकझोर-कर कहा, "उठो भाई, अपना वतन आ गया···" वतन ! ओठ फड़फड़ाये—दो सोयी-सोयी भरी हुई बाँहें उठीं, ओठ फड़फड़ाये—"डरो मत, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा···" आवाज़ मौत की खामोशी में खो गयी। पथरायी हुई आँखों की पलकें जड़ हो गयीं—वतन की यात्रा खत्म हो गयी। और रक्षा करनेवाली बाँहें हमेशा के लिए स्थिर हो गयीं। ड्राइवर ने सर्द हाथों से उठाकर बुझे हुए शरीर को ज़मीन पर लिटा दिया। मिट्टी मिट्टी से मिल गयी। लेकिन सुनो, मिट्टी से एक धीमी-सी आवाज उठ रही है।

डरो मत, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। मैं···

अक्तूबर, 1950

अज्ञेय की कविता नाच

A költő előadásában:
http://videolike.org/view/yt=J-HzeAeQR-j

एक तनी हुई रस्सी है जिस पर मैं नाचता हूँ।
जिस तनी हुई रस्सी पर मैं नाचता हूँ
वह दो खंभों के बीच है।
रस्सी पर मैं जो नाचता हूँ
वह एक खंभे से दूसरे खंभे तक का नाच है।
दो खंभों के बीच जिस तनी हुई रस्सी पर मैं नाचता हूँ
उस पर तीखी रोशनी पड़ती है
जिस में लोग मेरा नाच देखते हैं।
न मुझे देखते हैं जो नाचता है
न रस्सी को जिस पर मैं नाचता हूँ
न खंभों को जिस पर रस्सी तनी है
न रोशनी को ही जिस में नाच दीखता है :
लोग सिर्फ़ नाच देखते हैं।
पर मैं जो नाचता हूँ
जो जिस रस्सी पर नाचता हूँ
जो जिन खंभों के बीच है
जिस पर जो रोशनी पड़ती है
उस रोशनी में उन खंभों के बीच उस रस्सी पर
असल में मैं नाचता नहीं हूँ।
मैं केवल उस खंभे से इस खंभे तक दौड़ता हूँ
कि इस या उस खंभे से रस्सी खोल दूँ
कि तनाव चुके और ढील में मुझे छुट्टी हो जाए-
पर तनाव ढीलता नहीं
और मैं इस खंभे से
उस खंभे तक दौड़ता हूँ
पर तनाव वैसा बना ही रहता है
सब कुछ वैसा ही बना रहता है
और वही मेरा नाच है जिसे सब देखते हैं
मुझे नहीं
रस्सी को नहीं
खंभे नहीं
रोशनी नहीं
तनाव भी नहीं
देखते हैं-नाच।

ΠΑΙΔΙΟΘΕΝ

I

Ἡ νοσταλγία ἐξακολουθεῖ νὰ σκέφτεται
ἀπὸ τότε ποὺ τὴν ἄφησες,
πάνω στὴν ἴδια ἡλιακὴ συμπάθεια ποὺ θώπευε ἄζωα ντουβάρια

ἀστικὰ τριξίματα
ἦταν στὸ ἐσωτερικὸ δωμάτιο κάποια στοργὴ
γύψινες ὑπομνήσεις γέλιου
γιὰ τοὺς ἄλλους οἱ γιορτάδες καμάρι μου
συλλάβιζε τὸ σκυμμένο τσιγάρο τοῦ μπαμπᾶ
τοῖχοι ἰσχνοί, ἀνεπίχριστες πνοὲς
φιλιὰ μετόπης.

Δὲν ἔχω ἠθικὴ στάση καμία.
Δὲν πληροφοροῦμαι. Ρημάζω ἀσοβάντιστα.
Ὑποδομὲς καὶ δημιουργήματα.
Ἐκπόνηση. Μετακινήσεις. Στόχος.

II

Κυρίως ἐκτιμῶ τὰ εἰλικρινὴ ἐξαρτήματα / θυμητάρια οἰκογένειας
μυθιστορήματα παρατημένα στὴν ἐνδοσυνεννόηση τοῦ σπιτιοῦ
ὅπως ταιριάζει στὴν ἀπρόσκοπτη ἐπαφὴ ποιητῶν μέσα στὸ σπίτι
μιὰ οἰκογένεια ποιητῶν λείπει ἀπ' τὸ σπίτι
ἀπέμεινε ὅμως μνημοσύνη, ἡ θεραπευτική μου ἀποχή,
φροντίδα ἀφειδής.
Ἀπόχη. Ἀφήνει πότε-πότε ἐλεύθερους κορυδαλλοὺς γονεῖς μου
(θέλουν νὰ βγοῦνε στὸ μπαλκόνι, ἄσωτα,
γιὰ συνεκφώνηση παλιῶν στιγμῶν
μὲ νεοϊδρυθέντα τιτιβίσματα ἀναμνήσεων) μιὰ λέξη
ἐπαναλαμβανόμενα νερὰ
οἱ γονεῖς ἀρχιτεκτονημένη ἀποχαύνωση ἀπὸ λέξεις

Καμιὰ ζωή. Τραγικὴ γλωσσού, ἴσκιος, σπουργίτι ἀδερφή μου,
Χρεωλυσία.
Βαφτίστηκε ἡ παιδικὴ ἀσπρομάλλα καμινάδα.
Σπρώχνει τὰ καροτσάκια μὲ τοὺς ὕπνους.

Ανδρέας Μήτσου

Κουστούμι από γνήσιο αγγλικό κασμίρι

Κατεβαίναμε ψηλά από την εκκλησία.

Μπροστά πήγαινε η μάνα μου και την ακολουθούσαν τα τρία αδέρφια μου.

Εγώ, ερχόμουνα παραπίσω, όπως ήταν το χούι μου. Είχαμε το μνημόσυνο για τα σαράντα του πατέρα μου.

Τότε τον είδα.

Περνούσε στον κεντρικό δρόμο του χωριού, στητός και κορδωμένος. Οι δικοί μου, ότι είχαν στρίψει αριστερά, για το σπίτι μας, όταν αυτός ξεφύτρωσε από το μονοπάτι πλάι στο ποτάμι, τη Μαντήλω, και βάδιζε σ' αντίθετη κατεύθυνση, προς την πλατεία.

Αλλαξα πορεία, ξέκοψα από την οικογένεια και τον ακολούθησα.

Γιατί φορούσε το κουστούμι του πατέρα μου.

«Είμαι ο γιατρός» φώναζε χαιρέκακα. «Είμαι ο γιατρός Παπαθωμάς».

Παλαβός δεν ήταν, δεν τάχε χάσει ακόμα, παρά ένας βαμμένος κόκκινος, ένα δεκαοχτάχρονο παλιόπαιδο, που ξέμεινε από τους άλλους φονιάδες και δεν δίστασε να βγάλει τα ρούχα του πατέρα μου και να τα φορέσει ο ίδιος, αφήνοντας το τρυπημένο από τις σφαίρες κορμί ολόγυμνο, πάνω στα βουνά.

Για να το φάνε πιο εύκολα τα όρνια και τα τσακάλια.

Ηταν ξενόφερτος στο χωριό. Δεν ξέραμε από πού κρατούσε η σκούφια του. Τον είχαν στρατολογήσει με το ζόρι οι αντάρτες και έγινε μετά ένα σκυλί μαύρο, ένας γενίτσαρος, τόσο που κι οι ίδιοι οι δικοί του τον φοβόντουσαν και τον απέφευγαν.

Το σώμα του πατέρα μου δεν το ηύραμε ποτέ.

Ο Μάμαλης, έτσι τον λέγαμε, διάβαινε κάθε μέρα μπροστά από το μεγάλο πέτρινο σπίτι μας, φωνάζοντας: «Είμαι ο γιατρός Παπαθωμάς. Είμαι ο γιατρός». Περιφερόταν μετά στην πλατεία επαναλαμβάνοντας την ίδια δήλωση.

Συνέχισε να το κάνει αυτό και πολλά χρόνια αργότερα. Κανείς όμως δεν τον απόπαιρνε πια. Κανείς δεν του 'δινε σημασία, αφού είχε χάσει τελικά τα μυαλά του.

Πήγε καιρό φυλακή, τον βασάνισαν οι χωροφύλακες, τον πέρασαν από φάλαγγα, τι άλλο τούκαναν, δεν ξέρω.
Ελευθερώθηκε με την αμνηστία, γύρισε και εγκαταστάθηκε στο χωριό.

Την πρώτη φορά που βγήκε στην πλατεία φορούσε πάλι το κουστούμι τού πατέρα μου κι

έλεγε και ξανάλεγε τα ίδια λόγια. Τόσο που τον συνήθισαν όλοι, κι όσοι νεότεροι μάλιστα δεν τον ξέρανε, ούτε είχαν ακούσει τίποτε για το φόνο, για την εκτέλεση, τον πιστεύανε πως ήταν όποιος έλεγε.

Τον δέχτηκα στην αυλή μου. Είχα μείνει η μόνη κληρονόμος στο αρχοντικό του γιατρού, τ' αδέρφια μου έφυγαν στην Αθήνα, η μάνα μου πέθανε.

Του 'δινα κάθε μεσημέρι ένα πιάτο φαΐ, του το πήγαινα έξω, στο πεζούλι. Δεν τον ήθελα να μπει μέσα στο σπίτι μου.

Καθόμουνα και τον κοίταζα που έτρωγε, κι είχα ένα φόβο, έτρεμα από αγωνία, μην πέσει πάνω του το φαΐ, έτσι όπως έτρωγε, λαίμαργα. Και το λερώσει το κουστούμι του πατέρα μου.

Οταν τελείωνε το φαγητό, επαναλάμβανε την ίδια φράση. «Είμαι ο γιατρός» μου 'λεγε, «είμαι ο γιατρός, Παπαθωμάς». Και με περίμενε.

Πήγαινα τότε εγώ γρήγορα και του 'φερνα μια κανάτα νερό από το πηγάδι. Το 'πινε, σηκώνονταν κι έφευγε χορτασμένος.

Μόνο τη μέρα που χάθηκε από ανακοπή καρδιάς - ούτε τριάντα χρόνων - δεν επανέλαβε τη φράση του. Ηταν Κυριακή της Ανάστασης. Του 'χα βάλει ψητό αρνί να φάει. Απόφαγε, σταυροκοπήθηκε, πρώτη του φορά, κι αποχώρησε μετά σιωπηλός, χωρίς να περιμένει για το νερό.

Τον έκλαψα όπως δεν είχα κλάψει άνθρωπο. Κατέβασα με τα νύχια το πρόσωπό μου, ξερίζωσα τα μαλλιά μου. Εσκουξα δυνατά. Εφτασαν οι φωνές μου ως τους λόγγους και τ' άγρια βουνά. Σαν κότα κακάριζα πάνω στο νεκρό κορμί.

Το μαύρο κουστούμι του γιατρού, κουστούμι από γνήσιο αγγλικό κασμίρι άφθαρτο. Ολοκαίνουργιο. Το πουκάμισο λευκό, κολλαριστό και πεντακάθαρο. Ελαμπε μέσα στο φέρετρο. Τα κεντητά σκαρπίνια με τα μικρά δοντάκια, άλιωτα. Τόσα χρόνια.

Η γραβάτα του ήτανε κόκκινη. Κατακόκκινη, αίμα.

Κοίταζα από πάνω και δεν ήξερα αν τότε άρχιζε ή τελείωνε ο πόλεμος.

Fordítóverseny 2017. Ógörög próza

Ailianos, *Tarka történetek* 5.12-18
(Néhány eset az athéni törvényhozásról és bíróságról)

Οὐ δύναμαι δὲ Ἀθηναίων μὴ οὐ φιλεῖν ταῦτα. ἐκκλησίας οὔσης Ἀθηναίοις παρελθὼν ὁ Δημάδης ἐψηφίσατο θεὸν τὸν Ἀλέξανδρον τρισκαιδέκατον. τῆς δὲ ἀσεβείας ὁ δῆμος τὸ ὑπερβάλλον μὴ ἐνεγκών, ζημίαν ἐτιμήσαντο τῷ Δημάδῃ ταλάντων ἑκατόν, ὅτι θνητὸν δὴ τὸν Ἀλέξανδρον ὄντα ἐνέγραψε τοῖς Ὀλυμπίοις.

Ἦσαν δὲ ἄρα Ἀθηναῖοι δεινῶς ἐς τὰς πολιτείας εὐτράπελοι καὶ ἐπιτήδειοι πρὸς τὰς μεταβολὰς παντὸς μᾶλλον. βασιλείαν μὲν γὰρ ἤνεγκαν σωφρόνως ἐπὶ Κέκροπος καὶ Ἐρεχθέως καὶ Θησέως καὶ τῶν Κοδριδῶν κάτω, τυραννίδος δὲ ἐπειράθησαν ἐπὶ τῶν Πεισιστρατιδῶν, ἀριστοκρατίᾳ δὲ ἐχρήσαντο μέχρι τῶν τετρακοσίων· εἶτα ὕστερον δέκα τῶν πολιτῶν καθ' ἕκαστον ἔτος ἦρχον τῆς πόλεως, τελευταῖον δὲ ἐγένετο ἀναρχία περὶ τὴν τῶν τριάκοντα κατάστασιν. ταύτην δὲ τὴν οὕτως ἀγχίστροφον μεταβολὴν τοῦ τρόπου εἰ ἐπαινεῖν χρή, ἀλλὰ ἔγωγε τοῦτο οὐκ οἶδα.

Νόμος καὶ οὗτος Ἀττικός. ὃς ἂν ἀτάφῳ περιτύχῃ σώματι ἀνθρώπου, πάντως ἐπιβάλλειν αὐτῷ γῆν, θάπτειν δὲ πρὸς δυσμὰς βλέποντας. καὶ τοῦτο δὲ ἦν φυλαττόμενον παρ' αὐτοῖς. βοῦν ἀρότην καὶ ὑπὸ ζυγὸν πονήσαντα σὺν ἀρότρῳ ἢ καὶ σὺν τῇ ἁμάξῃ, μηδὲ τοῦτον θύειν, ὅτι καὶ οὗτος εἴη ἂν γεωργὸς καὶ τῶν ἐν ἀνθρώποις καμάτων κοινωνός.

Ὅτι δικαστήρια ἦν Ἀττικὰ περὶ μὲν τῶν ἐκ προνοίας ἀποκτεινάντων ἐν Ἀρείῳ πάγῳ, περὶ δὲ τῶν ἀκουσίως ἐπὶ Παλλαδίῳ· περὶ δὲ τῶν κτεῖναι μὲν

ὁμολογούντων, ἀμφισβητούντων δὲ ὅτι δικαίως, ἐπὶ Δελφινίῳ ἐγίνοντο αἱ εὐθύναι.

Ὅτι ἐκ τοῦ τῆς Ἀρτέμιδος στεφάνου πέταλον χρυσοῦν ἐκπεσὸν ἀνείλετο παιδίον, οὐ μὴν ἔλαθεν. οἱ οὖν δικασταὶ παίγνια καὶ ἀστραγάλους προύθηκαν τῷ παιδὶ καὶ τὸ πέταλον· ὃ δὲ καὶ αὖθις ἐπὶ τὸν χρυσὸν κατηνέχθη. καὶ διὰ ταῦτα ἀπέκτειναν αὐτὸν ὡς θεοσύλην, οὐ δόντες συγγνώμην τῇ ἡλικίᾳ, ἀλλὰ τιμωρησάμενοι διὰ τὴν πρᾶξιν.

Ὅτι τοσοῦτον ἦν Ἀθηναίοις δεισιδαιμονίας, εἴ τις πρινίδιον ἐξέκοψεν ἐξ ἡρῴου, ἀπέκτεινον αὐτόν. ἀλλὰ καὶ Ἀτάρβην, ὅτι τοῦ Ἀσκληπιοῦ τὸν ἱερὸν στρουθὸν ἀπέκτεινε πατάξας, οὐκ ἀργῶς τοῦτο Ἀθηναῖοι παρεῖδον, ἀλλ' ἀπέκτειναν Ἀτάρβην, καὶ οὐκ ἔδοσαν οὔτε ἀγνοίας συγγνώμην οὔτε μανίας, πρεσβύτερα τούτων ἀμφοτέρων τὰ τοῦ θεοῦ ποιησάμενοι. ἐλέγετο γὰρ ἀκουσίως οἳ δὲ μεμηνὼς τοῦτο δρᾶσαι.

Ἡ ἐξ Ἀρείου πάγου βουλὴ ἐπεί τινα φαρμακίδα συνέλαβον καὶ ἔμελλον θανατώσειν, οὐ πρότερον αὐτὴν ἀπέκτειναν πρὶν ἢ ἀπεκύησεν· ὅτε γὰρ συνελήφθη, ἔκυε. τὸ ἀναίτιον οὖν βρέφος ἀναλύοντες τῆς καταδίκης, τὴν αἰτίαν μόνην ἐδικαίωσαν τῷ θανάτῳ.

Fordítóverseny 2017. Ógörög vers

Töredékek a törvénytelen vagyonszerzésről

Részletek Stobaios idézetgyűjteményéből (3.10)

3.10.7. Εὐριπίδου Ἰξίονος (fr. 425 N.2).

Ὅστις γὰρ ἐπὶ τὸ πλέον ἔχειν πέφυκ' ἀνήρ,
οὐδὲν φρονεῖ δίκαιον οὐδὲ βούλεται,
φίλοις τ' ἄμικτός ἐστι καὶ πάσῃ πόλει.

3.10.21. Μενάνδρου Κόλακι (fr. 6 com. IV p. 154).

Οὐδεὶς ἐπλούτησεν ταχέως δίκαιος ὤν·
ὁ μὲν γὰρ αὐτῷ συλλέγει, καὶ φείδεται,
ὁ δὲ τὸν πάλαι τηροῦντ' ἐνεδρεύσας πάντ' ἔχει.

3.10.22. Ἀντιφάνους (fab. inc. fr. 40 com. III p. 148).

Τὰ πονηρὰ κέρδη τὰς μὲν ἡδονὰς ἔχει
μικράς, κριθέντα δ' ὕστερον λύπας μακράς.

3.10.23. Εὐριπίδου Ἰνοῦς (fr. 419 N.2).

Βίᾳ νυν ἕλκετ' ὦ κακοὶ τιμὰς βροτοί,
καὶ κτᾶσθε πλοῦτον πάντοθεν θηρώμενοι,
σύμμικτα μὴ δίκαια καὶ δίκαι' ὁμοῦ·
ἔπειτ' ἀμᾶσθε τῶνδε δύστηνον θέρος.